Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 7.384
Volume - 7, Issue - 12, December - 2024

DOIs:10.2018/SS/202412009 --:-- Research Paper / Article / Review

संस्कृत वांगमय में पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी तन्त्र की चिरन्तन स्मृतिः

डॉ0 वन्दना मिश्रा
असिस्टेन्ट प्रो0 संस्कृत विभाग
सन्त तुलसी दास पी0जी0 कालेज कादीपुर, सुलतानपुर।
Email – ishekhar7@gmail.com

सारांश : प्राकृतिक विरासत देहाती दुनिया के लिए भगवान का सबसे बड़ा उपहार है। किसी भी संस्कृति का उत्थान और अंत प्रकृति द्वारा निर्मित जीवन की नींव पर निर्भर करता है।वैदिक कालीन मानव प्रकृति को जीवनदात्री समझता था। तथा उसके सभी घटकों जैसे अग्नि, वायु व जल इत्यादि को सुरसम्य मानकर पूजता था। क्योंकि वह इसके हितसाधन का माध्यम बन चुकी थी। कृषि से लेकर सभी जीवकोपार्जन की सामग्री व वस्तुओं को वह प्रकृति से प्राप्त करता था। इसका तात्पर्य यह नहीं कि वैदिक कालीन मानव स्वार्थता से लिप्त था। अपितु उसका उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण भी होता था। जब वैदिक कालीन समाज पर्वों व शुभ अवसरों पर प्रकृति का पूजन करता था। तो इससे प्रकृति प्रेम का भाव स्फुटित होता था। यह भाव ही पर्यावरण संरक्षण का बुनियादी आधार बनता था। अनादिकाल से पर्यावरण संरक्षण का भाव भारतीय चिन्तन के केन्द्र में रहा है। चाहे वह पौराणिक हो या मध्यकाल हो या आधुनिक काल।

बीज शब्दः पर्यावरण संरक्षण का भाव भारतीय चिन्तन के केन्द्र में अनादिकाल से रहा है।

1. प्रस्तावना :

पर्यावरण एक व्यापक शब्द है। परि और आङ् उपसर्ग वृञ्वरणे धातु से भावार्थ में ल्युट् प्रत्यय के योग से निष्पन्न पर्यावरण शब्द का व्यापक अभिप्राय चराचर जगत को आवृत करने वाली सम्पूर्ण प्राकृतिक शक्तियों एवं परिस्थितियों का योग है जिनके बिना जीवन का अस्तित्व असंभव है। पर्यावरण प्राणी मात्र के जीवन के स्वभाव, व्यवहार और विकास को समग्रता से प्रभावित करता है। पर्यावरण की व्यापक परिधि में पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश, ऋतु, पर्वत, नदियाँ, सागर, महासागर, सरोवर, वृक्ष, लता, वनस्पतियाँ, सभी जीव जन्तु, गृह, नक्षत्र आदि समग्र चराचर का जीवन चक्र समाविष्ट होता है। ये सभी पर्यावरणीय तत्व समग्र जीवन चक्र को सृजित, संचालित और प्रभावित करते हैं तथा पर्यावरण इन सभी से स्वयं भी प्रभावित होता है। इस प्रकार पर्यावरण और जीवनचक्र परस्पर पूरक हैं।

संस्कृत हमारी सबसे पुरानी भाषा है इसलिए उसके साहित्य में पर्यावरण की स्मृति का सबसे आदिम रूप है। अकारण नहीं कि हमारे आरंभिक साहित्य का एक बड़ा हिस्सा 'आरण्यक' है। तब पेड़-पौधे, पशु-पक्षी सभी परिवार के अंग जैसे लगते हैं। ये मनुष्य के लिए जितने आवश्यक हैं मनुष्य भी उनके लिए उतने ही अपरिहार्य हैं। संस्कृत साहित्य से परिचय रखने वाले 'कवि-समय', 'कवि प्रसिद्धि' और 'दोहद' से परिचित होंगे। 'दोहद' शब्द का अर्थ 'गर्भवती की इच्छा' है अथवा जिन द्रव्यों और क्रियाओं से अकाल में ही पुष्पोद्गम कराया जाता है, उसे 'दोहद' कहते हैं। जिस प्रकार वृक्षदेवता स्त्रियों में 'दोहद' का संचार करते थे, उसी प्रकार सुंदरी स्त्रियों की अधिष्ठात्री यक्षिणियां स्त्री-अंग के स्पर्श से वृक्षों में भी 'दोहद' का संचार करती थीं। संस्कृत काव्य में स्त्रियों के पदाघात से वृक्षों के पुष्पित होने की बहुत चर्चा है। मेघदूत में स्त्री के विभिन्न अंगों और क्रियाओं के संस्पर्श से प्रियंगु,

बकुल, अशोक, तिलक, कुरबक, मंदार, चम्पक, आम, नमेरु तथा कर्णिकार आदि वृक्षों के पुष्पित होने की बात है। 'कवि-प्रसिद्धि' है कि सुंदरियों के पदाघात से अशोक में पुष्प खिल आते हैं।

प्राचीन साहित्य में सर्वत्र जलाशयों में जल और जीवन के प्रतीक कमल का वर्णन किया गया है। जलाशयों में हंसों का वर्णन भी 'कवि प्रसिद्धि' है, क्योंकि हंस-मिथुन उर्वरता के प्रतीक हैं। इसीलिए प्राचीन काल में नववधू के परिधान-दुकूल पर हंस-मिथुन अंकित हुआ करते थे। भारतीय भाषाओं के काव्यग्रंथ इस चक्रवाक पक्षी के प्रणयाख्यान से भरे पड़े हैं। प्राचीन काल में पक्षी को जीवन का अनिवार्य अंग माना जाता था। वात्स्यायन ने कामसूत्र में नागरिकों को भोजन के बाद शुक-सारिका आलाप तथा लाव, कुक्कुट और मेषों के युद्ध देखने की व्यवस्था की है। भोजन के बाद प्रत्येक प्रतिष्ठित नागरक इन क्रीड़ाओं को अपने मित्रों के साथ देखता था। शुभ-अशुभ जानने के लिए भी पक्षियों की गतिविधि पर विशेष ध्यान दिया जाता था। वस्तुतः हिन्दी का 'सगुन' संस्कृत 'शकुन' शब्द से बना है जिसका अर्थ पक्षी है। वराहमिहिर की वृहत्संहिता में श्यामा, श्येन, शशघ्न, वंजल, मयूर, श्रीकर्ण, चक्रवाक, चाष, भाण्डीरक, खंजन, शुक, काक, कपोत, भारद्वाज, कुलाल, कुक्कुट, खर, हारीत, गृद्ध, पूर्णकूट और चटक आदि को शकुनसूचक पक्षियों की श्रेणी में रखा गया है। संस्कृत साहित्य से इन पक्षियों के शकुन के कारण बड़ी-बड़ी घटनाओं के होने का साक्ष्य मिलता है। कभी-कभी शकुन मात्र से भावी राज्यक्रांति का अनुमान कर लिया जाता और तदनुसार रणनति बनती। काग और कउआ जीवन के आगामी वृत्तांत बतलाने में भी निपुण माने गये हैं।

उपनिषदों ने तो पर्यावरण को परम सत्ता का ही रुपान्तरण माना है। उपनिषद् कहती हैं कि परमात्मा ने एकोऽहं बहुस्यामः।" का संकल्प लेकर पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश और उनसे निर्मित मनुष्य पशु, पक्षी, पृथ्वी, नदी, सागर, पर्वतादि के रुप में स्वयं का ही विस्तार किया। फलतः भारतीय समाज और संस्कृति में निहित जीवन और पर्यावरण की परस्परपूरकता और सह अस्तित्व एवं उसकी सुरक्षा के प्रति चिन्ता और चिन्तन की सशक्त अभिव्यक्ति समग्र संस्कृत साहित्य में हुयी हैद्य लगभग सभी भारतीय दर्शनों का मन्तव्य है कि समग्र आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक जगत पंचकोशीय है। व्यष्टिगत एकल व्यक्तित्व हों या समष्टिगत ब्रह्माण्ड हो,सभी आनन्दमय, विज्ञान मय, मनोमय, प्राणमय और अन्नमय कोशों के योग से निर्मित हैं। इन पंचकोशों का निर्माण पर्यावरण के प्रधान घटक आकाश,वायु,जल, अग्नि और पृथ्वी के स्थूल रुप पंच महाभूत तथा सूक्ष्म रुप पंचतन्मात्रा शब्द, स्पर्श, रस, रुप और गन्ध के विशिष्ट समन्वय से होता है। ऋषि इस रहस्य से भलीभाँति परिचित थे कि पर्यावरणीय तत्वों के प्रभावित होने से भौतिक जगत और उसमें पल रहे जीवन का प्रभावित होना स्वाभाविक है। प्राचीनकाल में ऋषियों के आश्रम में भी शुक-सारिकाओं का वास था। किसी वृक्ष के नीचे शुक-शावक के मुख से गिरे नीवार (वन्य धान) को देखकर ही दुष्यंत को यह समझने में देर नहीं लगी थी कि यहाँ किसी ऋषि का आश्रम है। शुक-सारिकाएँ विलासी नागरकों के बहिर्द्वार पर ही नहीं बल्कि पंडितों के अंतःपुर की भी शोभा बढ़ाती थीं। शंकराचार्य को मंडन मिश्र के घर का मार्ग बताते समय स्थानीय परिचारिका ने कहा था, जहाँ शुक-सारिकाएँ 'स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणं' का शास्त्रार्थ कर रही हों, वही मंडन मिश्र का घर है। कवि वाणभट्ट ने अपने पूर्व-पुरुष कुबेरभट्ट का परिचय देते हुए बड़े गर्व से लिखा है कि उनके घर के शुकों और सारिकाओं ने समस्त वांग्मय का अभ्यास कर लिया था, और यजुर्वेद और सामवेद का पाठ करते समय पद-पद पर ये पक्षी विद्यार्थियों की गलती पकड़ा करते थे।

इसलिए ऋग्वेद की प्रथम ऋचा से लेकर अद्यावधि तक के संस्कृत साहित्य में पृथ्वी, जल, वायु, आकाश और अग्नि आदि सभी पर्यावरणीय घटकों की सुरक्षा की कामना व्यापक लोकमंगल भाव से की गयी है।वैदिक ऋचाओं में उपास्य अग्नि, वायु, सूर्य, ऊषा, इन्द्र, वरुण, आदि देव वस्तुतः हमारी पर्यावरणीय शक्तियां ही हैं। ये देव शक्तियां ही स्वयं द्वारा निर्मित प्राणी मात्र के लिए बिना किसी भेदभाव के जल, वायु, प्रकाश, भोजन, ऊर्जा, आवास आदि अनिवार्य उपभोग सामग्री प्रदान करती हैं।संस्कृत साहित्य में पेड़, पौधे, जल, जमीन, जंगल, नदियाँ,के प्रति जन चेतना की अभिव्यक्ति पदे पदे हुई है। पूरा संस्कृत वाड्मय वृक्ष, वन औषधि, वन्य तथा अरण्यवासी जन्तुओं में देवत्व दृष्टि का आह्वान करता है। संस्कृत साहित्य इस सत्य का दृढ़ता से समर्थक है कि पर्यावरणीय घटकों, पेड़, पौधों, जड़ी बूटियों का बचाना वस्तुतः जीवन का बचाना है तथा उन्हें नष्ट करना या नष्ट होते देखना आत्मघात जैसा ही है। इसी भाव से पूरा वैदिक वाड्मय तथा उसके अनुसरण पर रचित परवर्ती समग्र संस्कृत साहित्य पर्यावरण के प्रति देवत्व

भाव से आस्थावान है। विश्वसाहित्य में प्राचीनतम ऋग्वेद की प्रथम ऋचा में ही पर्यावरण के प्रमुख घटक अग्नि की स्तुति की गयी है-

"अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।होतारं रत्नधातमम्।"

ऋग्वेद में सैकड़ों सूक्तों में अग्नि का जीवन के योग क्षेम की दृष्टि से महत्व प्रतिपादित है। अग्नि का मूल स्रोत सूर्य है। सूर्य को चराचर जगत की आत्मा के रुप में पहचान कर वैदिक ऋषियों ने समग्र सृष्टि के सृजन, संरक्षण और संहरण में सूर्य की महनीय भूमिका निरुपित किया है-"सूर्य आत्मा जगतस्थुश्च।" वैदिक साहित्य में गायत्री मन्त्र द्वारा आराध्य महान दैवीय सावित्री तेज वस्तुतः सौर ऊर्जा ही है जिससे भू आदि भौतिक लोकों को प्रकाशित करते हुए प्राणी मात्र की बौद्धिक क्षमताओं के विकास की भी कामना की गयी है। वैदिक ऋचाओं में सभी पर्यावरणीय घटकों की शान्ति की प्रार्थना विश्वनियन्ता से इस प्रकार की गयी है कि हे परमात्मा! हमारे लिए आकाश, अंतरिक्ष, पृथ्वी ,जल, औषधियाँ, वनस्पतियाँ, विश्वेदेव, एवं ब्रह्म सभी शान्ति प्रदाता हों, एवं चारों ओर शान्ति हो -

" ऊँ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिः पृथिवी शान्तिरापःशान्तिरोषधयः शान्तिः।वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः।
सर्व शान्तिः शान्तिरेवशान्तिः सा मा शान्तिरेवशान्ति।।"

वैदिक ऋषियों ने पर्यावरण पारिस्थितिकी तन्त्र के साथ हमारे रहस्यात्मक सम्बन्धों को जानकर पर्यावरण को धर्म, संस्कृति और जीवन व्यवहार से जोड़कर अनूठा चिन्तन दिया। आज असंयमित भौतिक उपभोग की वितृष्णा में अन्धे होकर प्रकृति का शोषण कर रहे मनुष्य को आर्ष ऋषियों की प्रकृति के प्रति स्नेहमयी दृष्टि मनुष्य और प्रकृति के साथ अन्तःसम्बन्धों का स्मरण कराती है। ऋषियों ने पृथिवी, आकाश, जल, वायु, वृक्ष, वनस्पति, समुद्र,नद- नदियों के साथ न केवल देवत्व भाव देखा अपितु इनके साथ माता ,पिता, भ्राता, भगिनी आदि पारिवारिक आत्मीय सम्बन्ध स्थापित किये और स्वतः प्रेरित होकर इन सभी की सुरक्षा को स्वयं के जीवन का हिस्सा बनाने की प्रेरणा दी।ऋग्वेद में धरती को माता और आकाश को पिता माना गया है- "द्यौऽपितः पृथिवी मातरधुक्।"

अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में भी यही भाव व्यक्त किया गया है कि यह धरती हमारी माता है और हम इसके पुत्र हैं- "माता भूमिः पुत्रोंऽहं पृथिव्याः" धरती के साथ माता पुत्र का यह अति आत्मीय सम्बन्ध पर्यावरण के प्रति ऋषियों के सर्वाधिक राग और पर्यावरणीय चेतना का उत्कृष्ट उदाहरण है। वेदों में जल के राजा इन्द्र एवं वृत्र के युद्ध का उल्लेख है- "अहन् वृत्रं वज्रेण महता वधेन।' इन्द्र देव ने घातक दिव्य वज्र से वृत्रासुर का वध किया और उसके चंगुल में फंसे जलों को मुक्त किया। इस रुपक के माध्यम से इस विचार की पुष्टि होती है कि प्रकृति एवं पर्यावरण की सुरक्षा ही दैवीय शक्तियों का प्रधान कार्य है। वेदों में पर्जन्य (मेघ) देवता की महत्वपूर्ण भूमिका है । पर्जन्य भूमि को उर्वरा बनाते हैं, वनस्पतियों का पोषण करते हैं एवं उनमें प्राण शक्ति का संचार करते हैं ।इस प्रकार वैदिक ऋषि प्राकृतिक उपादान देव, भूमि, वनस्पतियों के साथ संवेदनशीलता व्यक्त कर पर्यावरण के प्रति अपनी चेतना पदे पदे सिद्ध करते हैं । वेदों में प्रतिपादित यज्ञ विधान प्रकृति और पर्यावरण चक्र के सन्तुलन का उपाय ही है। प्राकृतिक यज्ञ चक्र का बहुत सरल रुप में व्याख्यान करते हुए कहा गया है कि सभी प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं। अन्न की उत्पत्ति वर्षा से होती है। वर्षा यज्ञ से उत्पन्न होती है, यज्ञ विहित कर्मों से उत्पन्न होता है। इस प्रकार प्राकृतिक रुप संचालित सम्पूर्ण जीवन चक्र ही यज्ञस्वरुप है-

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः।
यज्ञाद् भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भव :।।

अनेक वैदिक सूक्तों में जल की अमृत के रुप में महिमा का प्रतिपादित करते हुए शुद्ध जल प्रवाह की कामना की गयी है।यथा- "अपस्वऽन्तरमृतम" अर्थात् जल अमृत है।न केवल वैदिक साहित्य अपितु सम्पूर्ण पौराणिक और शास्त्रीय साहित्य पर्यावरण विषयक चिन्तन और उसकी सुरक्षा की चिन्ता से युक्त दिखाई देता है। श्रीमद्भागवत महापुराण में पूरे ब्रह्माण्ड को विराट पुरुष का स्वरुप बताकर सभी पर्यावरणीय तत्वों को उस विराट पुरुष के अंग उपांगों के रुप में निरुपित करते हुए कहा गया है कि समुद्र विराट पुरुष की कोख हैं, पहाड़ अस्थिपंजर हैं, हवा साँस है, नदियाँ उसकी धमनियां हैं तथा पेड़ उसके शरीर के रोएँ हैं।

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः।
यज्ञाद् भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भव :।।

अनेक वैदिक सूक्तों में जल की अमृत के रुप में महिमा का प्रतिपादित करते हुए शुद्ध जल प्रवाह की कामना की गयी है। यथा- "अपस्वऽन्तरमृतम" अर्थात् जल अमृत है।न केवल वैदिक साहित्य अपितु सम्पूर्ण पौराणिक और शास्त्रीय साहित्य पर्यावरण विषयक चिन्तन और उसकी सुरक्षा की चिन्ता से युक्त दिखाई देता है। श्रीमद्भागवत महापुराण में पूरे ब्रह्माण्ड को विराट पुरुष का स्वरुप बताकर सभी पर्यावरणीय तत्वों को उस विराट पुरुष के अंग उपांगों के रुप में निरुपित करते हुए कहा गया है कि समुद्र विराट पुरुष की कोख हैं, पहाड़ अस्थिपंजर हैं, हवा साँस है, नदियाँ उसकी धमनियां हैं तथा पेड़ उसके शरीर के रोएँ हैं।जीवन, कर्म तथा गुण प्रवाह इस विराट पुरुष की गति हैं-"कुक्षि समुद्रा गिरयोऽस्थिसंघा,नद्योऽस्य नाड्योऽथ तनूरुहाणि।महीरुहाविश्वतनोर्नरेन्द्र । अनन्तवीर्यः श्वसितं मातरिश्वा, गतिर्वयः कर्म गुणप्रवाह।।

भविष्य पुराण में तो पुत्रों से भी अधिक दुलार और चिन्ता पेड़ों के लिए करने की प्रेरणा देते हुए कहा गया है कि पुत्र होने पर सद् गति हो ही जायेगी, यह तय नहीं है। यदि कपूत जन्मा तो वह न इस लोक में चैन से जीने देगा और न परलोक में सद्गति हो सकेगी लेकिन यदि समझदार व्यक्ति पेड़ लगाकर उन्हें पुत्र भाव से दुलार करे तो वह ऐसे अनन्त पुण्यों का फल भागी हो जाता है जो घर में किसी सपूत के जन्म लेने या, यज्ञ, दान, तप आदि से भी दुर्लभ हैं-

पुत्रैर्बिना शुभगतिर्न भवेन्नराणां,
दुष्पुत्रकैरिति ततोभयलोकनाशः।।
एतत्विचार्य सुधिया परिपाल्य वृक्षान्,
पुत्राः पुराण विधिना परिपालनीयाः।।
सदा स तीर्थो भवति सदा दानं प्रयच्छति।

सदा यज्ञ स यजते यो रोपयति पादपम्।। प्रकृति प्रेम ही पर्यावरण संरक्षण का मूल है। देखा जाए तो पर्यावरण संचेतना की भावना प्रत्येक काल में विद्यमान थी। संस्कृत के सभी कवि अपनी काव्य रचनाओं में सूर्य, चन्द्रमा, प्रातःकाल, सन्ध्या, रात्रि, पर्वत, वन, मेघ एव नदी आदि का यथास्थान वर्णन करते हैं। संस्कृत साहित्य के समान पर्यावरण चिन्तन का कोई अन्य प्राचीन साहित्य इस समय उपलब्ध नहीं होता। पर्यावरण का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है- परितः आव्रियते आच्छाद्यते येन तत ् पर्यावरणम्। संस्कृतसाहित्य में महाकवि भवभूति का पर्यावरण के प्रति उच्चकोटि का चिन्तन दिखाई दते है। महाकवि भवभूति की तीन नाट्यकृतियाँ उपलब्ध हैं- उत्तररामचरितम्, महावीरचरितम् और मालतीमाधवम्। इन तीनों नाटकों में महाकवि भवभूति ने अनेक स्थलों पर प्राकृतिक तत्त्वों के माध्यम से अपनी कृतियों को सुसज्जित किया है। जिसे देखकर भवभूति के प्रकृति प्रेम की समुत्कृष्टता का दर्शन होता। पर्यावरण के प्रति मनुष्य के एकात्म का प्रतिपादन समूचे संस्कृत साहित्य की आत्मा है,जिसके अनेक उदाहरण प्रत्येक साहित्यिक कृति में उपलब्ध हैं। यथा-अभिज्ञान शाकुन्तम् नाटक मेंउसकी नायिका शकुन्तला की पति गृह की विदाई के समय पेड़ पौधों के साथ उसके पारिवारिक सम्बन्धों का स्मरण कराते हुए ऋषि कण्व विदाई की अनुमति मांगते हैं कि "जो स्वयं जल पीने से पहले वृक्षों को जल पिलाती रही है। मंडनप्रिया होने पर भी स्नेहवश एक पत्ता तक नहीं तोड़ती थी। प्रथम बार पुष्प आने पर उत्सव मनाती थी वही शकुन्तला पतिगृह जा रही है, उसे अनुमति देते हैं कि मनुष्य के लिए उनके जल का स्पर्श करना भी सुरक्षित नहीं है।

नगरों के समीप से गुजरने वाली नदियों का स्वरूप एक गंदे नाले में परिवर्तित हो चुका है। वैज्ञानिक प्रगति एवं औद्योगिकीकरण के परिणाम स्वरूप देवनदी कहीं जाने वाली गंगा जैसी नदी के तट पर अनेकों उद्योगों के जहरीले अपशिष्ट मानवीय जीवन के लिए गहरे संकट का सन्देश दे रहे हैं। कवि इस यथार्थ से बहुत आहत हैं कि देवता भी जिस नदी के तटों पर जलक्रीड़ा के लिए आया करते थे, वही तट जलाए जाते हुए शवों के कारण दुर्गन्ध से व्याकुल हैं-

नित्यं तन्मणिकर्णिकानिकटतो दन्दह्यमानैः शवैः।
तस्याः भड्गाताराड्गरशिधुना दुर्गन्धपर्याकुल :।।

प्रकृति प्रेम ही पर्यावरण संरक्षण का मूल है। देखा जाए तो पर्यावरण संचेतना की भावना प्रत्येक काल में विद्यमान थी।संस्कृत के सभी कवि अपनी काव्य रचनाओं में सूर्य, चन्द्रमा, प्रातःकाल, सन्ध्या, रात्रि, पर्वत, वन, मेघ एव नदी आदि का यथास्थान वर्णन करते हैं। संस्कृत साहित्य के समान पर्यावरण चिन्तन का कोई अन्य प्राचीन साहित्य इस समय उपलब्ध नहीं होता। पर्यावरण का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है- परितःआव्रियते आच्छाद्यते येन तत पर्यावरणम्। संस्कृतसाहित्य में महाकवि भवभूति का पर्यावरण के प्रति उच्चकोटि का चिन्तन दिखाई दते है। महाकवि भवभूति की तीन नाट्यकृतियाँ उपलब्ध हैं- उत्तररामचरितम्, महावीरचरितम् और मालतीमाधवम्। इन तीनों नाटकों में महाकवि भवभूति ने अनेक स्थलों पर प्राकृतिक तत्त्वोंके माध्यम से अपनी कृतियों को सुसज्जित किया है। जिसे देखकर भवभूति के प्रकृति प्रेम की समुत्कृष्टता का दर्शन होता है। आधुनिक संस्कृत साहित्य की चिन्ता यह अधिक है कि वर्तमान का पर्यावरण संकट वुभुक्षितं किं न करोति अर्थात "भूखा क्या पाप नहीं करता" जैसी पारम्परिक धारणा को भी तोड़ता नजर आ रहा है क्योंकि कि वर्तमान में पर्यावरण क्षति का महान संकट भूखे पेट वालों के कारण नहीं पूरी तरह से भरे पेट वालों द्वारा हो रहा है। औद्योगिक क्रांति से उपजे मनुष्य ने पर्यावरण के बगैर जीवन को गले लगाने की भूल की है। 'प्रकृति के सुकुमार कवि' की घोषणा है-'छोड़ द्रुमों की मृदु छाया, तोड़ प्रकृति से भी माया, बाले, तेरे बाल-जाल में, कैसे उलझा दूं लोचन।' प्रकृति से माया टूटी नहीं कि साहित्य 'कंक्रीट का जंगल' हो गया है। आधुनिकता विलुप्त हो चुके पर्यावरण की स्मृति से आक्रांत है। आधुनिक साहित्य का बहुलांश 'शोकगीत' और 'विदागीत' से भरा है।सुखद है कि समकालीन कविता में पर्यावरण और जीवन की चिंता समान रूप से मुखर हुई है। समकालीन कवि को इस बात का बोध हो चला है कि फूल, पेड़, चिडियां और कुएं का गायब होना महज पर्यावरण का संकट नहीं है। यह हमारी संवेदना के नष्ट होने के भी सबूत हैं। पर्यावरण का संकट अंततः संवेदना का संकट भी है। सब के धागे आपस में एक-दूसरे से गूंथे हुए हैं। इस लिए पर्यावरण संरक्षण एवं पारिस्थितिक सन्तुलन वर्तमान समय की सबसे बड़ी चुनौती है जिससे निपटना परमावश्यक है। जिससे ऋषियों का संकल्प -

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।

अर्थात् "सभी सुखी हों, सभी निरोग हों, सभी का कल्याण हो, कोई भी दुःखभागी नहीं बने।" फलित हो सके।

<u>सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः</u>

1. वैदिक साहित्य और संस्कृति।
2. अभिज्ञानशाकुन्तलम् चतुर्थ अंक।
3. यजुर्वेद संहिता; सातवलेकर पारडी।
4. अभिज्ञानशाकुन्तलम् - कालिदास
5. स्वपनवासवदत्तम भास 4/3
6. महाभारत - वेदव्यास अनुशासन पर्व
7. रामायण - वाल्मीकि 2/91/09
8. ऋग्वेद 10/186/3
9. अथर्ववेद 12/1/20
10. वृहदारण्यकोपनिषद
11. भारतायनम् महाकाव्य- 8/44 हरेकृष्णशतपथी
12. श्रीमद्भगवद्गीता 3/14
13. बुद्धर्रत 6/22
14. कादम्बरी-कथामृतम - बाणभट्ट सम्पादक-डॉ उमाकान्त चतुर्वेदी